वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६७ अंक २ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, सिम्बर, २०१७

सम्पा॰ **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व॰ **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

क्या इन्सान ने ही भगवान का निर्माण किया है?

—भूपेश आर्य

अगर इन्सान ने ही भगवान् का निर्माण किया है तो इन्सान को किसने बनाया? इन्सान में इतनी क्षमता भी नहीं कि एक सरसों का दाना ही बना दे। भगवान् की तो बात बहुत दूर की है। सृष्टि कौन चला रहा है, क्या इन्सान चला रहा है? अगर इन्सान के बस में कुछ होता तो अपनी मौत को क्यों नहीं रोकता? कोई इन्सान मरना नहीं चाहता लेकिन फिर भी मरता है, ये व्यवस्था कौन चलाता है? ईश्वर!

1. **प्रश्न**—क्यों मनुष्य के अलावा दुनिया का एक भी प्राणी भगवान् को नहीं मानता?

   उत्तर—संसार में जितने भी प्राणी हैं उनमें मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। मनुष्य को ईश्वर ने बुद्धि विशेष दी है। और प्राणियों में इतनी बुद्धि नहीं जिससे वे ईश्वर को जान सकें।

2. **प्रश्न**—क्यों जहाँ इन्सान नहीं पहुँचा वहाँ एक भी मंदिर, मस्जिद या चर्च नहीं मिला?

   उत्तर—पहले मन्दिर, मस्जिद या चर्च नहीं थे। रामायण काल में भी किसी मन्दिर का नाम तक नहीं। महाभारत के बाद जब अज्ञान के कारण मत-पन्थ फैले तो मन्दिर, मस्जिद, चर्च आदि का निर्माण हुआ।

3. **प्रश्न**—क्यों अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग देवता हैं?

   उत्तर—इसका मतलब इन्सान को जैसी कल्पना सूझी वैसा भगवान बनाया गया। ये बुद्धि का दिवाला ही तो है।

4. **प्रश्न**—क्यों दुनिया में अनेक धर्म पंथ और उनके अपने-अपने देवता हैं?

इसका अर्थ भगवान भी एक नहीं।

उत्तर—धर्म तो एक ही है विश्व का—सत्य सनातन वैदिक धर्म। बाकी सभी मत, पन्थ हैं मनुष्यों के चलाये हुए हैं। ईश्वर भी एक ही है। अगर सबके ईश्वर अलग-अलग होते तो एक मत वालों का ईश्वर दूसरे मत वालों को दुःख पहुँचाता और अपने मत वालों को सुखी रखता है। परन्तु ऐसा होता नहीं। किसी भी मत के सभी मनुष्य सुखी नहीं रह सकते न सभी दुःखी रहते हैं। किसी भी मत में देख लो। सुख-दुःख अपने कर्मों के अनुसार सबको मिलता है। चाहे कोई मुसलमान हो, या हिन्दू, ईसाई, सिख कोई भी हो। इससे सिद्ध होता है कि ईश्वर सबका एक ही है। जो भी वेद-विरुद्ध आचरण करेगा वह दुःख भोगेगा।

5. **प्रश्न**—क्यों दिन प्रतिदिन नये-नये भगवान तैयार हो रहे हैं?
6. **प्रश्न**—क्यों अलग-अलग प्रार्थनाये हैं?

   उत्तर—मनुष्य के अज्ञान व मत मतान्तरों के फैलने के कारण।
7. **प्रश्न**—'माना तो भगवान नहीं तो पत्थर' क्या यह कहावत ऐसे ही नहीं बनी?

   उत्तर—मानने या न मानने से किसी वस्तु का अभाव नहीं होता और न किसी वस्तु का स्वरूप बदलता है। जैसे परमात्मा निराकार है और कोई उसको साकार मानकर उसकी मूर्ति बनाकर भोग लगाये तो क्या परमात्मा खा लेगा? कदापि नहीं। न परमात्मा निराकार से साकार हो सकता है। मानना न मानना मनुष्य की बुद्धि का विषय है कि वह किसी वस्तु को उसके वास्तविक स्वरूप में मानता है या नहीं।
8. **प्रश्न**—दुनिया में देवताओं के अलग-अलग आकार और उनको प्रसन्न करने के लिए अलग-अलग पूजा क्यों है?

   उत्तर—ये सब वेदज्ञान के अभाव के कारण हुआ है। आर्य लोग एक ईश्वर को मानते हैं व उनकी पूजा पद्धति भी एक ही है—योग द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार करना।
9. **प्रश्न**—अभी तक किसी इन्सान को भगवान मिलने के कोई प्रमाण क्यों नहीं है?

   उत्तर—परमात्मा साकार नहीं है जो किसी से मिलेगा। ईश्वरभक्त उसका अनुभव किया करते हैं। जैसे भूख-प्यास का अनुभव होता है।
10. **प्रश्न**—भगवान को मानने वाला और नहीं मानने वाला भी समान जिंदगी क्यों जीता है?

उत्तर–भगवान् को मानने वाला व उसकी आज्ञा में चलने वाला कभी दु:खी नहीं रहता। आने वाला समय उसका उज्ज्वल होता जायेगा। अगर वह दु:खी भी होगा तो उसमें दु:ख सहने की शक्ति भी रहेगी। यह बात गलत है कि भगवान को मानने वाला और न मानने वाला दोनों समान जिन्दगी जीते हैं।

11. **प्रश्न**–क्या भगवान किसी का भी भला या बुरा नहीं कर सकता?
उत्तर–मनुष्य को परमात्मा ने वेदरूपी ज्ञान दिया है और बुद्धि दी है। जिससे मनुष्य अच्छे कर्म करे और बुरे छोड़े। परमात्मा मनुष्यों के कार्यों के अनुसार ही उन्हें फल देता है या अच्छा–बुरा करता है। यही परमात्मा का न्याय है।

12. **प्रश्न**–क्या भगवान भ्रष्टाचार, अन्याय, चोरी, बलात्कार, आतंकवाद, अराजकता रोक नहीं सकता?
उत्तर–भ्रष्टाचार, अन्याय, चोरी, बलात्कार आदि कार्य देश के प्रधानमंत्री, राज्य के मुख्यमंत्री आदि रुकवा सकते हैं। ईश्वर ने वेद रूपी ज्ञान मनुष्य को इसलिए दिया है कि वह अच्छे बुरे में अंतर समझकर अच्छे कर्मों को करे, बुरे को छोड़े। जब कोई देश वेद–ज्ञान का अमल नहीं करेगा तो वहाँ ये बलात्कार आदि बढ़ेंगे ही। मनुष्यों को परमात्मा ने कर्म करने में स्वतन्त्र बनाया है।

13. **प्रश्न**–छोटे मासूम बच्चों पर बंदूक से गोलियाँ दागने वालों के हाथ भगवान क्यों नहीं पकड़ सकता?
उत्तर–मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है। परन्तु फल भोगने में ईश्वराधीन है। अच्छे का फल अच्छा और बुरे का फल बुरा मिलता है। ईश्वर कर्म करने में किसी की स्वतन्त्रता में बाधा नहीं डालता। हाँ, उसकी आत्मा में पाप करते समय डर जरूर पैदा करता है। अर्थात् सावधान करता है कि ये कार्य गलत है। ये अलग बात है कि कोई उस प्रेरणा को अनसुना कर देता है कोई मान लेता है।

14. **प्रश्न**–मंदिर, मठ, आश्रम, प्रार्थना स्थल जहाँ माना जाता है कि भगवान का वास होता है वहाँ भी बच्चे महिलाएँ सुरक्षित क्यों नहीं हैं?
उत्तर–ये भौतिक स्थल या जगह हैं। परमात्मा को इन मन्दिरों की आवश्यकता नहीं। ईश्वर सर्वव्यापक है। सबके हृदय में है। जिसकी रक्षा करता है वह चाहे मन्दिर से बाहर हो वहाँ भी करता है।

15. **प्रश्न**–मंदिर, मस्जिद, चर्च को गिराते समय एक भी भगवान ने सामने आकर विरोध क्यों नहीं किया?
उत्तर–परमात्मा सर्वव्यापक है। वह मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे आदि में

कैद होकर नहीं बैठा। इसलिए मन्दिर, मस्जिद गिराने से ईश्वर का कोई सरोकार नहीं। न ईश्वर पर इन चीजों का प्रभाव पड़ता है। यह मनुष्य का कार्य है कि मन्दिर बनाये या उन्हें गिराये।

16. **प्रश्न**—बिना अभ्यास किये एक भी छात्र को भगवान ने पास किया हो ऐसा एक भी उदाहरण आज तक सुनने को क्यों नहीं मिला?
उत्तर—बिना परिश्रम किये ईश्वर भी फल नहीं देता। रोटी खाने के लिऐ भी पहले अनाज पिसवाना पड़ता है फिर उसकी रोटी बनाई जाती है। अगर कोई सोचे कि रोटी स्वयं मेरे मुँह में बिना हाथ लगाये आ जाये तो यह संभव नहीं है।

17. **प्रश्न**—क्यों बहुत सारे भगवान ऐसे हैं जिनको 25 साल पहले कोई नहीं जानता था परन्तु वह अब प्रख्यात भगवान हो गये हैं?
उत्तर—वे तथाकथित नामधारी गुरु हैं जो वेदादि शास्त्रों के विरुद्ध लोगों को चलाते हैं और लोगों को बहकाकर अपने चेले बनाते हैं।

18. **प्रश्न**—खुद को भगवान समझने वाले अब जेल की हवा क्यों खा रहे हैं?
उत्तर—वे तथाकथित गुरु हैं भगवान नहीं। चाहे भले ही अपने को भगवान मानते हों।

19. **प्रश्न**—दुनिया में करोड़ों लोग भगवान को नहीं मानते फिर भी वह सुख चैन से क्यों रह रहे हैं?
उत्तर—इस ईश्वर की सृष्टि में आस्तिक भी हैं और नास्तिक भी। जो लोग नास्तिक हैं वे यदि सुखी हैं तो वह सुख उनको पिछले जन्मों के अच्छे कर्मों के कारण मिल रहा है। लेकिन याद रखना कि ईश्वर को न मानने वाला भौतिक सुख तो प्राप्त कर सकता है वह भी पिछले अच्छे कर्मों के कारण लेकिन वह आगामी समय में दु:खी ही रहेगा और मन में प्रसन्नता का अभाव रहेगा। क्योंकि वेद में कहा है कि दु:खों का नाश ईश्वर की उपासना व शुभ कर्मों से ही हो सकता है। इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं।

20. **प्रश्न**—हिन्दु अल्लाह को नहीं मानते। मुस्लिम भगवान को नहीं मानते। ईसाई भगवान और अल्लाह दोनों को नहीं मानते। हिन्दु-मुस्लिम गॉड को नहीं मानते। फिर भी भगवानों ने एक-दूसरे को नहीं पूछा कि ऐसा क्यों?
उत्तर—सबको बनाने वाला ईश्वर एक है। ये सब अज्ञान व स्वार्थ के कारण मनुष्यों ने अपने मत-मतान्तर चलाये हैं। महाभारत तक सभी एक ईश्वर को मानते थे। महाभारत काल के बाद लोगों ने वेद-विद्या

को भूलने के कारण स्वार्थ व अज्ञान के कारण मत-मतान्तर खड़े कर दिये। अगर इन मतों के चलाने वालों को हटा दें तो ये सब मत धड़ाम से गिर पड़ेंगे। धर्म व ईश्वर सबके लिए एक ही है—सत्य सनातन वैदिक धर्म।

21. **प्रश्न**—एक धर्म कहता है कि भगवान का आकार नहीं। दूसरा भगवान को आकार देकर सुन्दर कपड़े पहनाता है। तीसरा अलग ही बताता है। सच क्या है?

उत्तर—ईश्वर निराकार है। साकार वस्तु नष्ट होने वाली होती है। साकार सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, अजन्मा नहीं हो सकता। जबकि ईश्वर सर्वव्यापक, सबको जानने वाला और अजन्मा है। साकार अल्प शक्ति वाला व एकदेशी होता है।

22. **प्रश्न**—भगवान है तो लोगों में उसका डर क्यों नहीं?

उत्तर—भगवान है और लोगों में उसका डर भी है। इसका प्रमाण यह है कि जब मनुष्य पाप करने लगता है तो उसकी अन्तरात्मा में भय पैदा होता है कि यह काम गलत है लेकिन अपनी तामसिक वृत्ति प्रबल होने के कारण वह उस ईश्वर के निर्देश को अनसुना कर देता है और बुद्धि तामसिक होने के कारण ईश्वर के दण्ड को भूल जाता है।

23. **प्रश्न**—मांस भक्षण करने वाला भी जी रहा है और नहीं करने वाला भी जी रहा है। और जो दोनों खाता है वह भी जी रहा है, क्यों?

उत्तर—परमात्मा ने मनुष्य को कर्म करने में स्वतन्त्र बनाया है। प्रत्येक मनुष्य अपनी-अपनी वृत्ति के अनुसार कर्म करता है। कोई मांसाहारी है तो कोई शाकाहारी है। परन्तु मांसाहारी को अपने कुकर्मों का फल जरूर मिलेगा व रोग आदि भी उसको मांसाहार से लगेंगे और आयु भी कम होगी। क्योंकि वेदादि शास्त्रों में मांसभक्षण महापाप है।

24. **प्रश्न**—जब ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की तो फिर चार वर्ण की व्यवस्था सिर्फ भारत में क्यों पाई जाती है? अन्य देशों में क्यों नहीं पाई जाती है?

उत्तर—वर्ण-व्यवस्था आदिकाल से समस्त आर्यावर्त्त में चली आ रही है। जब से जातिवाद चला है तब से तो वर्ण व्यवस्था भारत में भी लागू नहीं है और देशों की बात ही क्या। और ये ध्यान रखो कि अमेरिका व अन्य देश ये सभी आर्यावर्त से ही बने हैं।

25. **प्रश्न**—जब वेद ईश्वर वाणी है तो भारत के अलावा अन्य देशों में वेद

क्यों नहीं हैं? तथा वेद सिर्फ ब्राह्मणों की भाषा संस्कृत में क्यों हैं अन्य भाषाओं जैसे बंगाली, उड़िया, उर्दू, अंग्रेजी, मलयालम, तेलगु, फारसी, आदि में क्यों नहीं हैं? क्या इन भाषाओं को बोलने वालों के लिए वेद नहीं हैं?

उत्तर—वेदों का ज्ञान परमात्मा ने जब मानवी सृष्टि की रचना की तो समस्त मनुष्यों के लिये दिया। ये अलग बात है कि बाद में आर्यवर्त, आर्य और दस्यु अर्थात् अनार्य में बंट जाने के कारण अलग-अलग देशों में विभाजित हो गया। संस्कृत भाषा में वेदों का ज्ञान इसलिए दिया क्योंकि संस्कृत भाषा ही सब भाषाओं की जननी है।

निराकार ईश्वर से वेद उत्पत्ति कैसे?

साभार—ऋषि दयानंद कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

इस विषय में कितने ही पुरुष ऐसा प्रश्न करते हैं कि ईश्वर निराकार है, उससे शब्द-रूप वेद कैसे उत्पन्न हो सकते हैं? इस का यह उत्तर है कि परमेश्वर सर्वशक्तिमान है, उसमें ऐसी शंका करनी स्वर्था व्यर्थ है, क्योंकि मुख और प्राण आदि साधनों के बिना भी परमेश्वर में मुख और प्राण आदि के काम करने का अनंत सामर्थ्य है, कि मुख के बिना मुख का काम और प्राण आदि के बिना प्राण आदि का काम वह अपने सामर्थ्य से यथावत कर सकता है। यह दोष तो हम जीव लोगों में आ सकता है कि मुख आदि के बिना मुख आदि के कार्य नहीं कर सकते हैं, क्योंकि हम लोग अल्प सामर्थ्य वाले हैं और इसमें यह दृष्टांत भी है कि मन में मुख आदि अवयव नहीं है तथापि जैसे उसके भीतर प्रश्न-उत्तर आदि शब्दों का उच्चारण मानस व्यापार में होता है वैसे ही परमेश्वर में भी जानना चाहिए और जो सम्पूर्ण सामर्थ्य वाला है सो किसी कार्य के करने में किसी की सहायता ग्रहण नहीं करता क्योंकि वह अपने सामर्थ्य से ही सब कार्यों को कर सकता है। जैसे हम लोग बिना सहायता से कोई काम नहीं कर सकते वैसा ईश्वर नहीं है। जैसे देखो की जब जगत उत्पन्न नहीं हुआ था उस समय निराकार ईश्वर ने सम्पूर्ण जगत को बनाया, तब वेदों के रचने में क्या शंका रही। जैसे वेदों में अत्यंत सूक्ष्म विद्या की रचना ईश्वर ने की है वैसे ही जगत में भी नेत्र आदि पदार्थ का अत्यंत आश्चर्यरूप रचना की है तो क्या वेदों की रचना निराकार ईश्वर नहीं कर सकता? ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में प्रथम वेद रचे, उनको पढ़ने के

पश्चात् ग्रन्थ रचने का सामर्थ्य किसी मनुष्य को हो सकता है, उसके पढ़ने और ज्ञान से बिना कोई भी मनुष्य विद्वान् नहीं हो सकता, जैसे किसी मनुष्य के बालक को जन्म से एकांत में रखके उसको अन्न और जल युक्ति से देवे, उसके साथ भाषा का व्यवहार लेशमात्र भी न करे, तो उसको भाषा का व मनुष्यपन का ज्ञान नहीं को सकता है, वह पशुओं की भाँति ही रहेगा, ऐसे ही सृष्टि के आरम्भ में यदि वेदों का ज्ञान नहीं मिलता तो सब मनुष्य पशुओं की भाँति रहते। इससे वेदों को ईश्वर ने ही रचा है, यही मानने में कल्याण है, अन्यथा नहीं। सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा जो वेदों का उपदेश नहीं करता तो आज पर्यन्त किसी मनुष्य को धर्म आदि पदार्थों की यथार्थ विद्या नहीं होती। वेदों के उत्पन्न करने में ईश्वर का प्रयोजन यह है कि वह ईश्वर परोपकारी है। तो जो परोपकारी परमेश्वर अपनी विद्या को हम लोगों के लिए उपदेश न करे तो विद्या से जो परोपकार करना परमेश्वर का गुण है सो वह न रहता, इससे परमेश्वर ने अपनी वेद विद्या का हम लोगों के लिए उपदेश करके सफलता सिद्ध करी है, क्योंकि परमेश्वर हम लोगों का माता-पिता के समान है, हम सब लोग जो उसकी प्रजा हैं उन पर नित्य कृपा दृष्टि रखता है जैसे अपने सन्तानों के ऊपर पिता और माता सदैव करुणा को धारण करते हैं कि सब प्रकार से हमारे पुत्र सुख पावें, वैसे ही ईश्वर भी सब मनुष्य आदि सृष्टि पर कृपा दृष्टि सदैव रखता है, इससे ही वेदों का उपदेश हम लोगों के लिए किया है।

ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की देश की आजादी में भूमिका

—मनमोहन कुमार आर्य,

ऋषि दयानन्द (1825-1883) के समय में देश एक ओर जहाँ अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड, मिथ्या परम्पराओं व अनेकानेक सामाजिक बुराईयों से ग्रस्त था वहीं दूसरी ओर इन्हीं कारणों से वह विगत सात सौ से कुछ अधिक वर्षों से पराधीनता के जाल में भी फँसा हुआ था। ऋषि दयानन्द वेदों के उच्च कोटि के विद्वान व सृष्टि के आदि काल से आरम्भ ऋषि परम्परा के योग्यतम प्रतिनिधि भी थे। वह राष्ट्र के सच्चे पुरोहित एवं सभी देशवासियों के आचार्य, कर्तव्य व आचरण की

शिक्षा देने वाले, गुरु भी थे। उनके सामने देश को अविद्या, अज्ञान व पाखण्डों से दूर करने की चुनौती थी और साथ ही देश की पराधीनता को भी समाप्त करना उनको अभीष्ट था। उन्होंने विचार कर देश से अविद्या व अन्धविश्वासों को दूर करने के कार्य को प्राथमिकता दी और सन् 1863 में वेदों का प्रचार, असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन करना आरम्भ कर दिया। धर्म विषयक सभी विषयों पर वह स्थान-स्थान पर जाकर प्रवचन दिया करते थे और लोगों का शंका समाधान भी करते थे। शंका समाधान सुनकर व प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर पठित, शिक्षित व निष्पक्ष लोगों की सन्तुष्टि हुआ करती थी और उनमें से कुछ उनके अनुयायी बन जाते थे।

पौराणिक हिन्दुओं की जिन प्रमुख मान्यताओं का वह खण्डन करते थे उनमें मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, बाल विवाह, बेमेल विवाह, जन्मना जातिवाद मुख्य थे वहीं सबको उन्नति के समान अवसर देने वाली गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित वैदिक वर्ण व्यवस्था का समर्थन भी वह करते थे। वेद विरोधी व मिथ्या परम्पराओं के समर्थकों को शास्त्रार्थ की चुनौती भी दी जाती थी। स्वामी जी ने अनेक मतों के विद्वानों से भिन्न-भिन्न विषयों पर शास्त्रार्थ किये। सबसे मुख्य शास्त्रार्थ मूर्तिपूजा पर वाराणसी में 16 नवम्बर, सन् 1869 को काशी के राजा श्री ईश्वरी प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में हुआ था। इस शास्त्रार्थ में स्वामी जी अपने वैदिक पक्ष को प्रस्तुत करने वाले अकेले विद्वान थे जबकि पौराणिक मूर्तिपूजक विद्वानों की संख्या 30 से अधिक थी। श्रोताओं के रूप में भी लगभग 50 हजार की जनसंख्या शास्त्रार्थ स्थल आनन्दबाग में उपस्थित थी। इस शास्त्रार्थ का निर्णय स्वामी दयानन्द जी के पक्ष में हुआ था। कालान्तर में स्वामी जी ने अपने विचारों को अनेक ग्रन्थों के माध्यम से प्रस्तुत किया।

संस्कृत व हिन्दी में ऋग्वेद (आंशिक) तथा यजुर्वेद के सम्पूर्ण भाष्य सहित सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, पंचमहायज्ञविधि, गोकरुणानिधि, व्यवहारभानु आदि उनके कुछ प्रमुख ग्रन्थ हैं। उनके यह सभी ग्रन्थ 'भूतों न भविष्यति' की उपमा को चरितार्थ करते हैं। 10 अप्रैल, सन् 1875 को स्वामी जी ने मुम्बई में वेदों के प्रचार व प्रसार के लिए 'आर्यसमाज' नामक संगठन स्थापित किया। सच्ची आध्यात्मिकता के प्रचार, समाज सुधार, पाखण्ड व अन्ध

विश्वासों का निवारण, देश में शिक्षा के प्रचार प्रसार हेतु डीएवी स्कूल तथा गुरुकुलों की स्थापना तथा देश की आजादी में उनकी व उनकी अनुयायी संस्था आर्यसमाज की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

ऋषि दयानन्द के समय देश अंग्रेजों का गुलाम था। अंग्रेज देशवासियों का शोषण व उन पर अत्याचार करते थे। देश व देशवासियों की उन्नति के मार्ग बन्द थे। आजादी की बात करना अपनी मृत्यु को दावत देना था। कोई उचित माँग करने व गलत नीतियों का विरोध करने पर वह उसे सहन नहीं कर पाते थे। सन् 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में देशवासियों का अमानवीय उत्पीड़न किया गया था। लोगों को ईसाई बनाने का षड्यन्त्र भी किया जाता था। यह वह काल था जब आजादी का आन्दोलन आरम्भ नहीं हुआ था और न ही देश में आन्दोलन का कहीं वातावरण ही था। कांग्रेस की स्थापना भी सन् 1885 में हुई। इससे 22 वर्ष पूर्व ही ऋषि दयानन्द ने वेद प्रचार करना आरम्भ कर दिया था। सन् 1874 में उनके एक भक्त राजा जयकृष्ण दास ने उन्हें अपने प्रमुख व सभी विचारों का ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा की जिससे वह लोग भी लाभान्वित हो सके जो उनके उपदेश सुनने आ नहीं पाते। ऐसे ग्रन्थ से वह लोग भी लाभान्वित हो सकते थे जो बहुत दूर रहते थे तथा सत्य धर्म व सत्य परम्पराओं को जानने के इच्छुक थे। ऐसे अनेक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्वामी दयानन्द जी ने सन् 1874 में सत्यार्थप्रकाश नामक अपना प्रमुख ग्रन्थ लिखा जिसका कुछ समय बाद सन् 1875 में प्रकाशन हुआ। इसका संशोधित संस्करण सन् 1883 में तैयार किया गया। 30 अक्टूबर, सन् 1883 को स्वामी जी की एक षडयन्त्र के अन्तर्गत मृत्यु के कारण संशोधित सत्यार्थप्रकाश का प्रकाशन सन् 1884 में हुआ। अपने इस ग्रन्थ में स्वामी जी ने कहीं स्पष्ट व कहीं संकेत रूप में देश की आजादी की चर्चा कर देशवासियों को देश को आजाद कराने के लिए प्रेरित किया।

अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में स्वदेशी राज्य व स्वराज्य का स्पष्ट रूप से उल्लेख कर विदेशी राज्य को माता-पिता के समान कृपा, न्याय व दया तथा पूर्ण निष्पक्ष होने पर भी उसके स्वराज्य व स्वदेशी राज्य के समान न होने की घोषणा कर उन्होंने आजादी की नींव रख दी थी, ऐसा हम अनुभव करते थे। यह बता दें कि उस समय स्वदेशी राज्य व स्वराज्य की कहीं चर्चा नहीं की जा रही थी। इन शब्दों का इतिहास में पहली बार

प्रयोग उन्हीं के द्वारा हुआ है। वह लिखते हैं 'अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त (भारत) में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय, राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है।' इसके बाद उन्होंने जो लिखा है स्वर्णिम अक्षरों में लिखने योग्य है व एक प्रकार से देश को आजाद कराने का एलान है। वह लिखते हैं 'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।' इन पंक्तियों में स्वामी दयानन्द जी ने स्वदेशी राज्य को सर्वोपरि उत्तम बताया है और कहा है कि अंग्रेजों के राज्य में अनेक गुण होने पर भी उनका राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है। यहाँ संकेत रूप में वह देशवासियों को पूर्ण सुख की प्राप्ति के लिए स्वदेशी राज्य की स्थापना के लिये प्रयत्न वा आन्दोलन की प्रेरणा करते हुए प्रतीत हो रहे हैं।

स्वामी दयानन्द जी के अन्य सभी ग्रन्थों में भी देश के स्वाभिमान वा आत्म गौरव को जगाने के लिऐ प्रचुर सामग्री मिलती है। लेख की सीमा के कारण सबका उल्लेख नहीं किया जा सकता। उनके ग्रन्थों से कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं। सत्यार्थप्रकाश में वह लिखते हैं कि 'यह आर्यावर्त (भारत) देश ऐसा देश है जिसके सदृश्य भूगोल में दूसरा कोई देश (इंग्लैण्ड, अमेरिका व अन्य भी) नहीं है। इसीलिये इस (आर्यावर्त देश की) भूमि का नाम सुवर्ण भूमि है क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। इसीलिये सृष्टि के आदि में (1,96,08,53 हजार वर्ष पूर्व) आर्य लोग (तिब्बत से सीधे) इसी देश में आकर बसे। (सृष्टि का आदि काल होने से यह सारा स्थान व देश खाली पड़ा था, कोई मनुष्य यहाँ रहता नहीं था, यह आर्य ही आदिवासी थे जिन्होंने इस आर्यावर्त वा भारत देश को बसाया, इनसे पूर्व अन्य कोई आदिवासी यहाँ बसता वा रहता नहीं था)। इसीलिए हम (ऋषि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के) सृष्टि विषय में कह आये हैं कि आर्य नाम उत्तम पुरुषों का है और आर्यों से भिन्न मनुष्यों का नाम दस्यु है। जितने भूगोल में देश हैं वे सब इसी

(आर्यावर्त भारत) देश की प्रशंसा करते हैं और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थर सुना जाता है, वह बात तो झूठी है, परन्तु आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिस को लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।' इन पंक्तियों में स्वामी दयानन्द जी ने भारत को विश्व का सबसे उत्तम देश बताया है और कहा है कि विदेशी (अंग्रेज आदि) इसके स्पर्श से अर्थात् संगति से धनाढ्य हो जाते हैं। इन पंक्तियों का उद्देश्य देशवासियों के आत्म गौरव को जगाना था। हमने पहली बार जब इन पंक्तियों को पढ़ा था तो हमने भी आत्मगौरव व रोमांच का अनुभव किया था।

ऋषि दयानन्द देश को आजाद कराने के लिये देशवासियों के आत्मगौरव में और वृद्धि करने के लिए यह भी बताते हैं कि सृष्टि के आरम्भ से पाँच सहस्त्र वर्ष पूर्व महाभारतकाल पर्यन्त भारत वा आर्यावर्त देश का ही समस्त भूमण्डल पर सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि राज्य था। सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में उनके शब्द हैं 'सृष्टि (के आरम्भ) से लेके पाँच सहस्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था। अन्य देशों में माण्डलिक अर्थात् छोटे–छोटे राजा रहते थे क्योंकि कौरव, पाण्डव पर्यन्त यहाँ के राज्य और राजशासन में सब भूगोल के सब राजा और प्रजा शामिल हुए थे।' वह यह भी कहते हैं कि महाराजा युधिष्ठिर जी के राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध पर्यन्त यहाँ के राज्य के आधीन सब राज्य थे। यह इसलिए लिखा है जिससे देश्वासी यह जान सकें कि अंग्रेजों की गुलामी तो दो सौ वर्ष से भी कम समय से है जबकि हमारे पूर्वजों ने तो पूरे विश्व पर 1.96 अरब वर्ष तक सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य किया है।

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में ही एक प्राचीन ग्रन्थ 'मैत्रयुपनिषद' का प्रमाण देकर बताया है कि सृष्टि के आरम्भ से लेकर महाभारतपर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल में ही हुए थे। अब इनके सन्तानों का अभाग्योदय होने से राजभ्रष्ट होकर विदेशियों (अंग्रेजों) के पादाक्रान्त हो रहे हैं। जैसे यहाँ सुद्युम्न, भूरिद्युम्न, इन्द्रद्युम्न, कुवलयाश्व, यौवनाश्व, वद्ध्रयश्व, अश्वपति, शशविन्दु, हरिश चन्द्र, अम्बरीष, ननक्तु, शर्याति, ययाति, अनरण्य, अक्षसेन, मरुत और भरत सार्वभौम सब भूमि (विश्व) में प्रसिद्ध चक्रवर्ती राजाओं के नाम लिखे हैं वैसे स्वायम्भुवादि चक्रवर्ती राजाओं के नाम स्पष्ट मनुस्मृति,

महाभारतादि ग्रन्थों में लिखे हैं। इसको मिथ्या करना अज्ञानी और पक्षपातियों का काम है। इसकी कहीं कोई चर्चा नहीं करता। कम्युनिस्ट इतिहासकार न करें, परन्तु भारतीय मनीषियों को तो इसका ज्ञान होना चाहिये और मीडिया में भी देशवासियों को इसकी जानकारी दी जानी चाहिये। आत्मगौरव में वृद्धि का यह भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है। स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में एक महत्त्वपूर्ण बात यह भी कही है 'परदेशी (अंग्रेज व अन्य विदेशी विधर्मी) स्वदेश में व्यवहार वा राज्य करें तो बिना दारिद्रय और दुःख के दूसरा कुछ भी (परिणाम) नहीं हो सकता।'

ऐसे अनेक प्रमाण स्वामी दयानन्द जी के सत्यार्थप्रकाश, आर्याभिविनय, संस्कृत वाक्य प्रबोध आदि ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। यह सब लिखने के पीछे उनका उद्देश्य यही स्पष्ट जान पड़ता है कि वह देशवासियों को यह सब तथ्य बता कर विदेशी राजनैतिक परतन्त्रता को दूर करने की ओर अग्रसर कर रहे थे। स्वामी जी के जीवनकाल व उसके बाद उनके यह क्रान्तिकारी विचार उनके सहस्रों व लाखों अनुयायियों व कुछ इतर देशवासियों में भी पहुँचे थे। योगी अरविन्द ने भी स्वामी दयानन्द जी को पढ़ा था। अतः इन विचारों का प्रभाव देशवासियों पर पड़ा। ऋषि दयानन्द जी की मृत्यु हो जाने के बाद आर्यसमाज को स्वतन्त्रता आंदोलन का नेतृत्व करना चाहिये था परन्तु ऐसा लगता है कि उनसे यह चूक हो गई। जो भी हो, आर्यसमाज के अनुयायियों ने आजादी के आन्दोलन को अपने कार्यों व बलिदानों से पोषित किया। देश की आजादी के आन्दोलन में सक्रिय लोगों में प्रायः सभी आर्यसमाजी किसी न किसी रूप में जुड़े होते थे। यहाँ तक कहा जाता है कि आजादी के आन्दोलन में 80 प्रतिशत लोग आर्यसमाजी थे। यह भी बता दें कि महादेव रानाडे और पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा स्वामी दयानन्द जी के दो प्रमुख शिष्य थे। रानाडे जी के शिष्य गोपाल कृष्ण गोखले जी थे और उनके महात्मा गाँधी। इसी प्रकार क्रान्तिकारियों के आद्य गुरु व आचार्य पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा थे जिन्होंने इंग्लैण्ड में 'इण्डिया हाउस' की स्थापना की थी। प्रायः सभी क्रान्तिकारी वहाँ रहा करते थे। वीर सावरकर जी व अन्य प्रमुख क्रान्तिकारी भी इण्डिया हाउस में ही रहते थे। आजादी के प्रमुख राष्ट्रीय नेता स्वामी श्रद्धानन्दजी, लाला लाजपत राय,

भाई परमानन्द जी, पं. रामप्रसाद बिस्मिल, शहीद भगतसिंह जी का पूरा परिवार स्वामी दयानन्द का अनुयायी था। इन कुछ उदाहरणों व चर्चा से स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द व आर्यसमाज का देश की आजादी में प्रमुख योगदान था। आज भी आर्यसमाज देश व समाज हित अनेकानेक काम कर रहा है। यदि सारा देश आर्यसमाज की विचारधारा को स्वीकार कर ले तो यह देश व पृथिवी सुख का धाम बन सकती है।

सत्यार्थप्रकाश में ऋषि दयानन्द ने योगेश्वर कृष्ण जी की प्रशंसा करते हुए कहा है कि यदि वह सचमुच होते तो वह अंग्रेजों के धुर्रे उड़ा देते। सम्भवतः उनकी मृत्यु के कारणों में से एक कारण सत्यार्थप्रकाश में विदेशी राज्य के विरुद्ध लिखे उनके शब्द हो सकते हैं। स्वामी दयानन्द मूर्तिपूजा-कृष्ण-अंग्रेज प्रसंग में लिखते हैं कि 'जब संवत् 1916 के वर्ष में (सन् 1857 के स्वातन्त्र्य समर में) तोपों के मारे मन्दिर की मूर्तियाँ अंग्रेजों ने उड़ा दी थीं जब मूर्ति कहाँ गई थी? प्रत्युत बाघेर लोगों ने जितनी वीरता की और लड़े, शत्रुओं को मारा, परन्तु मूर्ति एक मक्खी की टाँग भी न तोड़ सकी। जो श्रीकृष्ण के सदृश कोई (बुद्धिमान्, क्षत्रिय योद्धा) होता तो इनके (अंग्रेजों के) धुर्रे उड़ा देता और ये भागते फिरते। भला यह तो कहो कि जिस का रक्षक (कृष्ण जी की मूर्ति) मार खाय उसके शरणागत (कृष्ण जी के भक्त) क्यों न पीटे जायें? इसी के साथ लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्!

पुस्तक समीक्षा

वैदिक मान्यताओं का वैज्ञानिक एवं व्यवहारिक विवेचन

लेखकः-डॉ. राजपाल सिंह

प्रस्तुत पुस्तक **'वैदिक मान्यताओं का वैज्ञानिक एवं व्यवहारिक विवेचन'** कौ मैंने आद्योपान्त पढ़ा, विषय की गहराइयों में अवगाहन भी किया तथा कुछ गूढ़ विषयों-यथा पंचतत्व, ऊर्जा व आत्मा के वैज्ञानिक विवेचन ने मुझे प्रभावित भी किया। पंचतत्व की महिमा को अगर हम शरीर-धर्म की यर्थाथता व स्वास्थ्य के हिसाब से जानेंगे तो निश्चय ही दीर्घायु, प्रसन्नता व शान्ति प्राप्त होगी। सारा विश्व ही ऊर्जा का न केवल रूपान्तर है बल्कि उसी के विविध रूप-रंग व खेलों का एक परिपूर्ण रंगमंच भी है। ऋग्वेद का प्रथम मंत्र, **"अग्निमीळे पुरोहितं...धातमम्।** इसी वैज्ञानिक तथ्य की ओर इशारा करता है।

अग्निहोत्र के बारे में विश्व में हो रहे विभिन्न वैज्ञानिक प्रयोगों ने भारतीय वैदिक मान्यता को प्रमाणित किया है। विद्वान् लेखक ने अब होम-अग्निहोत्र से होने वाले विशेष लाभों का बखूबी वैज्ञानिक विवेचन भी किया है। मुझे आशा है कि इसे जानकर कम से कम वैज्ञानिक सोच रखने वाले लोग दैनंदिन जीवन में यज्ञ को अपनाकर जहाँ अपना व्यक्तिगत व पारिवारिक भला करेंगे, वही समाज व वातावरण को प्रदूषण रहित करने का सर्वहित कार्य करने की प्रेरणा भी लेंगे। भारत सरकार में मा० प्रधानमंत्री मोदी जी द्वारा चालू किये गये 'स्वच्छ भारत अभियान' में भी अग्निहोत्र को यदि शामिल किया जाये तो जहाँ पर्यावरण संतुलन में भारी योगदान होगा, वहीं ग्लोबल वार्मिंग जैसी मानवता पर लटकती विपदा का भी सम्यक समाधान हो सकेगा। ब्रह्माण्ड की कॉस्मिक ऊर्जा जब हम प्राणायामादि के अभ्यास से अपने शरीर मन के अंदर झंकृत करने की योग्यता पैदा कर सकेंगे तो एक अद्वितीय संगीत हमें दैनंदिन जीवन में तनाव, ब्लड प्रैशर, डायबिटीज व कैंसर जैसे शारीरिक व मानसिक रोगों से मुक्ति दिलाकर आत्म-तत्व के शाश्वत पथ की ओर अग्रसित भी करेगा।

"आत्मतत्व" के अस्तित्व व अवधारणा के बारे में इतना ही कहना पर्याप्त है कि उसका विचार ही उसके अस्तित्व का सबसे बड़ा प्रमाण है। श्वेताश्वरोपनिषद् तो 'भोक्ता प्रेरितारं' कहकर इस गुत्थी का एक अलभ्य वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करता है। इस अध्याय में लेखक ने जहाँ कई प्रश्नों के वैज्ञानिक उत्तर देने का सुन्दर प्रयास किया है वहीं आत्म तत्व संबंधी कई गंभीर प्रश्न भी विद्वान पाठकों के विचारार्थ प्रस्तुत किये हैं।

'धारणा' के अध्याय में योग दर्शन-आधारित पुरुष रूपी ईश्वर के गुण-कार्य-स्वभाव को यदि आज की धर्म परायण जनता अंगीकार कर लेती है तो दुनिया से जहाँ तथाकथित धर्म-मत सम्प्रदायों का बखेड़ा खत्म होगा वहीं धार्मिक उन्माद, मजहबी दंगे तथा आतंकवाद जैसे नासूर की भी अन्त्येष्टि होगी। सादी भाषा में हम कह सकते हैं कि दुनियाँ के लगभग 90 प्रतिशत लोग भगवान को मानते हैं पर 0.1 प्रतिशत भी उसे जानते नहीं हैं। बुखार के लक्षण-यथा वाइरल, टायफाईड, मलेरिया, अननोन जाने बिना एलौपैथी औषध लाभ के बजाय नुकसान कर देती हैं। ठीक इसी तरह ईश्वर के स्वरूप को जाने बिना विभिन्न कर्मकाण्डों से जहाँ मन:शान्ति नहीं मिल पाती वहाँ समय की बरबादी होकर जीवन में

विषाद भी पैदा हो सकता है। लेखक का ईश्वर संबंधी विवेचन धर्म भीरु जनता को अवतारवाद–पैगम्बरवाद जैसी अवैज्ञानिक कल्पनाओं से जहाँ मुक्ति देगा, वहीं महापुरुषों को असांसरिक न मानते हुए उनके पद्चिह्नों पर चलने की प्रेरणा भी देगा।

धारणा पर लिखते हुए लेखक की यह पंक्ति पवित्र मन से अधिक दिव्य, भव्य, सुन्दर ओर विशाल मंदिर संसार में कहीं नहीं है, हृदय को छू जाने वाली है। 'मनः एवं मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयो' अर्थात् मन ही मनुष्यों की मुक्ति व बन्धन का सबसे बड़ा कारण है। हमारे पूर्वज–मनीषियों का यह कथन कितना सटीक व सत्य है। वस्तुतः योग का लगभग सारा दर्शन ही मन को एकाग्र करने पर केन्द्रित है। अष्टांग योग के पाँच बहिर्योग अंगों का सतत अभ्यास किये बिना मनुष्य अन्तः योग (धरणा, ध्यान, समाधि) की तरफ बढ़ ही नहीं सकता जब तक अगला पैर जमीन पर जमता नहीं तब तक पीछे का पैर उठाया नहीं जा सकता।

कोई समाज कितना विकसित एवं सभ्य है इसका एक मात्र पैमाना अम्लीय परीक्षण–है कि समाज की महिलायें कितनी शिक्षित, सुरक्षित व कितनी सम्मानित हैं? नारी के बारे में वैदिक कुछ आदर्शों व मान्यताओं का वर्णन करते हुए विद्वान लेखक ने वर्तमान समाज में फैली विचार–सरणी को भी व्याघात किया है। नारी को किस प्रकार पारिवारिक क्लेशों से व सामाजिक अत्याचारों व अपराधों से बचाया जा सकता है इस पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। मैंने तो कई दिन पहले एक ट्वीट में लिखा था 'जिस दिन पति ने पत्नि को अपने से छोटा तथा पत्नि ने अपने को पति के बराबर मानने का विचार अंगीकार किया उसी दिन से परिवार रूपी भवन की नींव हिलने लगी। नारी के प्रति सम्मान की भावना कानून के डर से नहीं बल्कि पारिवारिक व सामाजिक संस्कारों से पैदा होगी।

मंथन शीर्षक में लिखे अध्याय में लेखक ने मनुष्य के लिए कर्तव्य, कर्म, अहिंसा, प्रेम, कर्म–फल आदि पर तथा गाँधी जी के तीन बन्दरों की अवधारणा पर अपने बेबाक विचार रखे हैं। व्यक्ति कार्य करने में स्वतन्त्र तथा फल भोगने में परतन्त्र है। कर्म सिद्धान्त इतना ही वैज्ञानिक है जितना कि न्यूटन के गति के नियम। प्रकृति में न कोई पारितोषिक है और न कोई दण्ड–वहाँ तो प्रत्येक कर्म का फल, विधान निश्चित है पर वह कैसे मिलेगा। इसके रूप, ढंग व समय अनेक कारणों के कारण मनुष्य की सांत बुद्धि से परे हैं। हवा, पानी, दिन, रात के चक्र की भाँति

कर्म–फल–कर्म के भी चक्र हैं। ईश्वर सहाय व विशेष पुरुषार्थ से ही मनुष्य इस चक्र को तोड़कर परान्तकाल तक मुक्ति का आनन्द ले सकता है।

'महाभारत' व रामायण के काल पर विद्वान् लेखक ने विभिन्न संदर्भ व वैज्ञानिक तर्क देकर बखूबी यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि दोनों ही घटनाएँ ऐतिहासिक हैं। महाभारत के बारे में जहाँ काल–क्रम की गणना ठीक है वहीं रामायण काल पर लेखक ने निर्णय विद्वान पाठकों व गवेषकों के लिए छोड़ दिया है। इच्छुक व सुधी पाठक मेरे द्वारा 2007 में लिखे विश्व प्रसिद्ध विस्तृत लेख भगवान राम की ऐतिहासिकता– Proving the Historicity of Lord Ram. को इन्टरनेट पर पढ़ सकते हैं। दुर्भाग्य की बात यह है कि आजादी के लगभग 70 वर्ष बीत जाने के बाद भी देश के विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में इतिहास पढ़ाया जा रहा है वह विदेशियों मूलतः ईसाई लेखकों व उनकी नकल करने वाले भारतीयों का लिखा हुआ है। बाइबल में लिखा है कि सृष्टि 4006 ईसा पूर्व में ही बनी है। अतः इन लेखकों ने दुनिया के विशेषतः भारतीय इतिहास के मूल को बाइबल की रोशनी में देखने का प्रयास किया है।

हमारे ऋषि–महर्षि सत्य के पुजारी तथा 'सत्यं' वद् धर्म चर के उपदेष्टा थे। मजाक में भी झूठ बोलना उनके लिए वाणी का पाप था। उन्होंने तो शब्द को प्रमाण मानकर शास्त्रों व काव्यों की रचना की है। उप सत्यकाम आत्म पुरुषों पर दुर्बुद्धि व दुराग्रह से देखना जहाँ अपने स्वार्थ का प्रतिबिम्ब है, वहीं भारी पाप भी है।

अन्तिम अध्याय में लेखक ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों को लिखा है। सुधी पाठक उससे अपने–अपने पाठ ले सकते हैं।

अन्त में–प्रोफेसर डॉ. राजपाल सिंह को इतनी सुन्दर सारगर्भित पुस्तक लिखने के लिये हार्दिक बधाई देता हूँ और विश्वास करता हूँ उनका ये चिन्तन जीवन के विभिन्न पहलुओं पर चलता ही रहेगा तथा आगे माखन के रूप में समाज को मिलेगा। मुझे यह भी विश्वास है कि अधिक से अधिक लोग इस पुस्तक को लेकर, पढ़कर, मनन–चिन्तन कर अपने जीवन की दिशा को सत्कार्य व सन्मार्ग पर लगाकर अन्तिम लक्ष्य चिरन्तन आनन्द को प्राप्त करने का प्रयत्न करेंगे।

चल ए इंसा, तो ऐसे चल, कि कारवाँ पीछे चले।
जब तू चल न सके, तो तेरी दास्तान चले।।

–डॉ. सत्यपाल सिंह, सांसद (बागपत)